International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 8 Issue 1 Ser. I || January 2019 || PP 104-107

मानवाधिकार और सामाजिक न्याय

डॉ जितेंद्र कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग एस. एम. कॉलेज चंदौसी

सारांश

सामान्य जीवनयापन के लिए प्रत्येक मनुष्य के अपने परिवार, कार्य, सरकार और समाज पर कुछ अधिकार होते हैं, जो आपसी समझ और नियमों द्वारा निर्धारित होते हैं। इसी के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 10 दिसंबर 1948 को सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणापत्र को आधिकारिक मान्यता दी गई, जिसमें भारतीय संविधान द्वारा प्रत्येक मनुष्य को कुछ विशेष अधिकार दिए गए हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाए गए मानवाधिकार संबंधी घोषणापत्र में भी कहा गया था कि मानव के बुनियादी अधिकार किसी भी जाति, धर्म, लिंग, समुदाय, भाषा, समाज आदि से इतर होते हैं। ये अधिकार देश के नागरिकों को और किन्हीं परिस्थितियों में देश में निवास कर रहे सभी लोगों को प्राप्त होते हैं। देश के विशाल आकार और विविधता, विकासशील तथा संप्रभुता संपन्न धर्म–निरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणतंत्र के रूप में इसकी प्रतिष्ठा, तथा एक भूतपूर्व औपनिवेशिक राष्ट्र के रूप में इसके इतिहास के परिणामस्वरूप भारत में मानवाधिकारों की परिस्थिति एक प्रकार से जटिल हो गई है। सामाजिक धरातल पर भारतीय संदर्भ में मानवाधिकार और न्याय का प्रश्न सामाजिक संरचना और इसमें परिवर्तन की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। मानवाधिकार का मसला और सामाजिक न्याय का सवाल उतना ही पुराना है जितना समाज। सदैव से ही न्याय समाज में व्यवस्था स्थापित करने का प्रमुख आधार रहा है। न्यायपूर्ण व्यवस्था राष्ट्र की प्रगति और कुशलता की सूचक होती है। न्याय ही सामाजिक तनावों को दूर करने का एकमात्र साधन है। विशेष रूप से एक लोकतांत्रिक देश में जहां व्यक्ति की स्वतंत्रता और समानता को विशेष महत्व दिया जाता हो। सामाजिक न्याय की पूर्ण ऐतिहासिकता को जब हम गहराई से देखने–समझने की कोशिश करते हैं तो पता चलता है कि धर्म, नीति, राजनीति से गुजरता हुआ यह बड़ा सवाल आज समाज के बीच आ खड़ा हुआ है। सामाजिक न्याय की ऐतिहासिकता के भारतीय संदर्भ को समाजषास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में समझने की आवष्यकता है।

प्रस्तावना

द्वितीय विष्वयुद्ध के बाद 1950 से ही मानव अधिकारों को लेकर विष्व–समाज थोड़ा सजग हुआ है। जब 'एमनेस्टी इंटरनेशनल' और 'ह्यूमन राइट्स वाच' जैसे अंतर्राष्ट्रीय संस्थान अस्तित्व में आए। जिनके प्रयासों का केन्द्र यही है कि कैसे विष्व के हर नागरिक को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विचारों की अभिव्यक्ति और धर्म की स्वतंत्रता एवं समान अवसर तथा सम्मान प्राप्त हो सके। सामाजिक जीवन के साथ राजनीति की सम्बद्धता बहुत जटिल होती है। चूंकि राजनीति की भूमिका या तो पुराने सामाजिक सम्बन्धों को कायम रखने या नवीन सम्बन्धों को बनाने में स्पष्ट होती है। राजनीति और सामाजिक न्याय के संबंध का इतिहास गवाह है कि सामाजिक न्याय के सिद्धान्त के पीछे नई–नई मानवीय नैतिकताओं के सार्वभौमिक विकास की मान्यता भी उतनी ही पुरानी है, जितनी कि मनुष्य की सभ्यता। इस निरन्तरता के मूल में नैतिकता का संवर्द्धन और नई आर्थिक–तकनीकी व्यवस्था का जनतंत्रीय राजनीति के माध्यम से स्थापन मुख्य माने जा सकते हैं। मानवाधिकार के समाजशास्त्र को समझने के लिए उन ऐतिहासिक मोड़ों को पहचानना जरूरी है, जहां आकर समाज–विज्ञानों का चिंतन विभिन्न प्रकार की उप–धाराओं को जन्म देता है। परिणामस्वरुप प्रायः आपसी विरोध जनित अभिप्रायों और आदर्शों का जन्म होता है। यह सामाजिक–सहमति के विकास के कारण सम्भव हो

पाता है। समाज में पनपी विभिन्न विचारधाराएं या उनकी उप–शाखायें इस बात को प्रमाणित करती हैं। इतिहास साक्षी है कि इस प्रकार का मत विभाजन तभी सम्भव हो पाया है, जब समाज अधिनायकवादी, सामन्तवादी और विभिन्न प्रकार की तानाशाही व्यवस्थाओं से मुक्त होकर जनतंत्रीय व्यवस्था में बदल सका। मानवाधिकार और सामाजिक न्याय का सवाल नित नये संदर्भों में नये अर्थ लिए खड़ा रहा है। यही वह सवाल है जो सम्पूर्ण मानवता को गत्यात्मक बनाए हुए हैं।

मानवाधिकार का अर्थ

मानव अधिकारों से अभिप्राय "मौलिक अधिकार एवं स्वतंत्रता" से है जिसके सभी मानव प्राणी हकदार है। अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं के उदाहरण के रूप में जिनकी गणना की जाती है, उनमें नागरिक और राजनैतिक अधिकार सम्मिलित हैं जैसे कि जीवन जीने और स्वतंत्र रहने का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और कानून के सामने समानता एवं आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के साथ ही साथ सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार, भोजन का अधिकार, काम करने का अधिकार एवं शिक्षा का अधिकार। यह सभी अधिकार भारतीय संविधान के भाग–तीन में मूलभूत अधिकारों के नाम से वर्णित किए गए हैं और न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय है, जिसको 'भारतीय संविधान' न केवल सुनिश्चित करता है, बल्कि इसका उल्लंघन करने वालों को अदालत सजा भी देती है। वैसे तो भारत में 28 सितंबर, 1993 से मानव अधिकार कानून अमल में लाया गया था और 12 अक्टूबर, 1993 में 'राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग' का गठन किया गया था, लेकिन संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 10 दिसंबर 1948 को घोषणा पत्र को मान्यता दिए जाने पर 10 दिसंबर का दिन मानवाधिकार दिवस के लिए निश्चित किया गया है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

भारत ने मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के तहत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन और राज्य मानवाधिकार आयोगों के गठन की व्यवस्था करके मानवाधिकारों के उल्लंघनों से निपटने हेतु एक मंच प्रदान किया है।

- भारत में मानवाधिकारों की रक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग देश की सर्वोच्च संस्था के साथ–साथ मानवाधिकारों का लोकपाल भी है। उच्चतम न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश इसके अध्यक्ष होते हैं। यह राष्ट्रीय मानवाधिकारों के वैष्विक गठबंधन का हिस्सा है। साथ ही यह राष्ट्रीय मानवाधिकार संस्थानों के एशिया पेसिफिक फोरम का संस्थापक सदस्य भी है। छभ्त्ब् को मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्द्धन का अधिकार प्राप्त है।
- मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम,1993 की धारा 12 (ज) में यह परिकल्पना भी की गई है कि छभ्त्ब् समाज के विभिन्न वर्गों के बीच मानवाधिकार साक्षरता का प्रसार करेगा और प्रकाशनों, मीडिया, सेमिनारों तथा अन्य उपलब्ध साधनों के ज़रिये इन अधिकारों का संरक्षण करने के लिये उपलब्ध सुरक्षा उपायों के बारे में जागरूकता बढ़ाएगा।
- इस आयोग ने देश में आम नागरिकों, बच्चों, महिलाओं, वृद्धजनों के मानवाधिकारों, स्ळठज् समुदाय के लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिये समय–समय पर अपनी सिफ़ारिशें सरकार तक पहुँचाई हैं और सरकार ने कई सिफारिशों पर अमल करते हुए संविधान में उपयुक्त संशोधन भी किये हैं।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (छभ्त्ब्) के कार्य

1. (छभ्त्ब्) शिकायतें प्राप्त करना तथा लोकसेवकों द्वारा हुई भूल–चूक अथवा लापरवाही से किये गए मानवाधिकारों के उल्लंघन की जाँच–पड़ताल शुरू करना इसमें शामिल हैं ताकि मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोका जा सके।

2. कैदियों की जीवन–दशाओं का अध्ययन करना, न्यायिक हिरासत तथा पुलिस हिरासत में हुई मृत्यु की जाँच–पड़ताल करना भी आयोग के कार्य–क्षेत्र में शामिल है।

3. समाज के विभिन्न वर्गों में मानवाधिकार से संबंधित जागरूकता बढ़ाना।

4. किसी लंबित वाद के मामले में न्यायालय की सहमति से उस वाद का निपटारा करवाना।

5. लोकसेवकों द्वारा किसी भी पीड़ित व्यक्ति या उसके सहायतार्थ किसी अन्य व्यक्ति के मानवाधिकारों के हनन के मामलों की शिकायत की सुनवाई करना।

6. संविधान तथा अन्य कानूनों के संदर्भ में मानवाधिकारों के संरक्षण के प्रावधानों की समीक्षा करना तथा ऐसे प्रावधानों को प्रभावपूर्ण ढंग से लागू करने के लिये सिफारिश करना।

7. गैर–सरकारी संगठनों तथा अन्य ऐसे संगठनों को बढ़ावा देना जो मानवाधिकार को प्रोत्साहित करने तथा संरक्षण देने के कार्य में शामिल हों इत्यादि।

भारत में मानवाधिकारों की स्थिति

देश के विशाल आकार, विविधता, विकासशीलता तथा संप्रभुता संपन्न धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणतंत्र के रूप में इसकी प्रतिष्ठा तथा पूर्व में औपनिवेशिक राष्ट्र के रूप में इसके इतिहास के परिणामस्वरूप भारत में मानवाधिकारों की परिस्थिति एक प्रकार से जटिल हो गई है। भारत का संविधान मौलिक अधिकार प्रदान करता है, जिसमें धर्म की स्वतंत्रता भी निहित है। इन्हीं स्वतंत्रताओं का फायदा उठाते हुए आए दिन सांप्रदायिक दंगे होते रहते हैं। इससे किसी एक धर्म के मौलिक अधिकारों का हनन नहीं होता है बल्कि उन सभी लोगों के मानवाधिकार आहत होते हैं जो इस घटना के शिकार होते हैं तथा जिनका घटना से कोई संबंध नहीं होता जैसे– मासूम बच्चे, गरीब पुरुष–महिलाएँ, वृद्धजन इत्यादि।

वर्तमान समय में मानवाधिकार आयोग के सामने चुनौतियाँ

1. आज लोकतंत्र में परिपक्वता और समानता की महत्ता बढ़ी है पर दलित और स्त्री अस्मिता के प्रश्न आज भी ज्यों के त्यों पड़े हैं। वे मानवाधिकारों की पुनर्समीक्षा की मांग कर रहे हैं। वे भी अस्तित्व से व्यक्तित्व की तरफ बढ़ना चाह रहे हैं समाज में अपने अधिकारों की सुरक्षा चाह रहे हैं।

2. सूचना क्रांति और भूमंडलीकरण के दौर ने भारत जैसे विकासशील देशों के सामने असुरक्षा की नई चुनौतियाँखड़ी कर दी हैं। इन परिस्थितियों में भारतीय राज्य अपने नागरिकों के मानवाधिकारों की रक्षा कैसे करें? वैष्विक होती दुनिया में राज्य की अपनी सामाजिक नीति और नियोजन कैसे विकसित हो? सामाजिक–आर्थिक विकास को जोड़ने वाले सरकारी प्रयासों की दिशा क्या हो? हाशिये पर पड़े कमजोर वर्गों के विकास के लिए राज्य की नीतियों में संतुलन कैसे बनें? इन तमाम सवालों का मानवाधिकारों के संदर्भ में सकारात्मक जवाब तलाशने की दिशा में बढ़ना ही मानवीय दृष्टि का विकास और विस्तार होगा।

सुझाव

1. द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (।त्ब्) ने अपनी रिपोर्ट में कुछ सिफारिशें की हैं जिससे कि मानवाधिकार आयोग को और अधिक प्रभावी बनाया जा सके। प्रशासनिक सुधार आयोग का मानना है कि (छभ्त्ब्) को विभिन्न सांविधिक आयोगों के समक्ष शिकायतें करने के लिये एकसमान प्रारूप तैयार किया जाए। इसके लिये पीड़ितों और शिकायतकर्त्ताओं का विवरण इस ढंग से दिया जाए जिससे विभिन्न आयोगों के बीच डेटा का तालमेल अच्छे से बैठ पाए।

2. मानवाधिकार आयोग को शिकायतों का निपटारा करने के लिये उपयोगी मानदंड निर्धारित करने चाहिये। ऐसे मुद्दों में कार्रवाई के निर्धारण तथा उसके समन्वयन के लिये आयोग में नोडल अधिकारी नियुक्त किये जाएँ और कार्यवाही को अधिक सफल बनाने के लिये प्रत्येक सांविधिक आयोग के अंदर एक आंतरिक पद्धति विकसित की जाए।

3. केंद्र तथा राज्य सरकारों को भी गंभीर अपराधों से निपटने के लिये सक्रियता के साथ कदम उठाने चाहिये। इसके लिये सरकारें मानवाधिकार आयोग की सहायता भी ले सकती हैं।

निष्कर्ष

सामाजिक न्याय एवं सुरक्षा का अधिकार और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की प्राप्ति का अधिकार अर्थात् समाज के एक सदस्य के रूप में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के उस स्वतंत्र विकास तथा गौरव के लिए जो राष्ट्रीय प्रयत्न या अंतर्राष्ट्रीय सहयोग तथा प्रत्येक राज्य के संगठन एवं साधनों के अनुकूल हो अनिवार्यतः आवश्यक आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की प्राप्ति का हक है। परंतु वर्तमान समय में दुनिया में अज्ञान, भूख और बीमारी का अनुपात कम नहीं हो रहा है। इसलिए अधिकारों की मान्यता और वास्तविकता के बीच अंतर बढ़ा है। किसी को आजादी देना और अधिकार देना, दोनों में बहुत अंतर है। आजादी एक स्थिति मात्र है जबकि अधिकार सुविधा और सुरक्षा है। आजादी में सुविधा तो हो सकती है। परन्तु निश्चितता और सुरक्षा का प्रायः अभाव रहता है। अधिकार एक तरह से निश्चितता है, आत्मरक्षा या सुरक्षा है। अतः देश में मानवाधिकारों की रक्षा तभी हो पाएगी जब सभी संस्थाएँ मिलजुल कर देश की एकता–अखंडता को बरकरार रखने में एक–दूसरे का सहयोग करेंगी। ज़रूरत है तो सिर्फ एक नेक पहल की।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बाबेल, बसन्ती लाल (2015). मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम–1993, जयपुर : सुविधा लॉ हाउस.
2. चतुर्वेदी, अरूण एवं संजय लोढ़ा (2019). भारत में मानवाधिकार, जयपुर : पंचशील प्रकाशन.
3. गुप्ता, कैलाशनाथ (2017). मानवाधिकार और उनकी रक्षा, दिल्ली : अविष्कार प्रकाशन.
4. जोषी, आर.पी. (2019).मावनाधिकार एवं कर्त्तव्य, अजमेर : अभिनव प्रकाषन.
5. कटारिया, सुरेन्द्र (2018). मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, जयपुर : आर.बी.एस.ए. पब्लिकेशन.
6. पलाई, अरूण कुमार (2019). भारत का राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, गठन, कार्य और माली परिदृश्य, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन्स.
7. पूरणमल (2015). मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान, जयपुर : पोइन्टर पब्लिकेशन्स.
8. शर्मा, सुभाष (2019). भारत मे मानवाधिकार, नई दिल्ली : नेशनल बुक पब्लिकेशन्स.
9. शाह, स्वप्नी एवं चौहान, तोलाराम (2012). उन्नति : दलित मानवाधिकार कार्यकर्ताओं के लिए प्रवेशिका, अहमदाबाद : उन्नति विकास शिक्षण संगठन.
10. यादव, वीरेन्द्र सिंह (2018). नयी सदी की दहलीज पर भारत : सामाजिक समस्याओं के उभरते क्षितिज, नई दिल्ली : ओमेगा पब्लिकेशन्स.